

नरसिम्हा राव सरकार के पांच वर्षों का लेखा जोखा

श्रमिक वर्ग के लिये उसका अर्थ क्या है!



सीटू प्रकाशन

नरसिम्हा राव सरकार के पांच वर्षों का लेखा जोखा

श्रमिक वर्ग के लिये उसका अर्थ क्या है!

अप्रैल-मई 1996 में होने जा रहे आगामी संसदीय चुनाव भारत के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण होंगे क्योंकि इन चुनावों के द्वारा आगामी पांच वर्षों के लिए देश के भाग्य का निर्णय लिया जाएगा। लोक सभा के साथ ही पश्चिम बंगाल, तमिलनाडु, असम, हरियाणा, पांडिचेरी तथा केरल विधान सभाओं के चुनाव भी होंगे। इन चुनावों का राष्ट्र की राजनीतिक स्थिति पर गहरा प्रभाव पड़ेगा। पिछले पांच वर्षों में नरसिम्हा राव सरकार द्वारा अपनाई गई अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष निदेशित नयी आर्थिक नीतियों के सम्बन्ध में श्रमिक वर्ग तथा परिश्रमी जनता को कटु अनुभव हुए हैं। इसलिए उन्हें इस सरकार को जिसके विरुद्ध उन्होंने संघर्ष किया है, हटाने के लिए इन राष्ट्रव्यापी चुनावों में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभानी होगी।

इसी लिए नरसिम्हा राव सरकार के पिछले पांच वर्षों का लेखा-जोखा करना आवश्यक हो गया है। सी आई टी यू ने पहले ही चेतावनी दी थी कि अमरीका के नेतृत्व वाले साम्राज्यवादी देशों के आदेश पर कांग्रेस सरकार द्वारा पिछले पांच वर्षों से अपनाई गई आर्थिक नीतियों ने देश को एक खतरनाक मार्ग पर धकेल दिया है। इस मार्ग पर चलते हुए उसने आत्म निर्भर अर्थ व्यवस्था का निर्माण करने के अपने प्रयासों को ही छोड़ दिया है। सरकार द्वारा गैट समझौते पर हस्ताक्षर किये जाने के फलस्वरूप तो देश की आर्थिक सम्प्रभुता का और भी अधिक क्षरण हुआ है।

सरकार ने बहुराष्ट्रीयकृत विश्व अर्थ व्यवस्था के नव-उपनिवेशवादी मकड़ जाल में फँस कर संरचनात्मक समायोजन कार्यक्रम शुरू कर दिया है। यह कार्यक्रम साम्राज्यवादी देशों ने हम पर थोपा है। उदारीकरण, निजीकरण तथा वैश्वीकरण के दर्शन पर आधारित यह कार्यक्रम संकटग्रस्त विश्व पूंजीवाद में नव जीवन का संचार करने की एक नयी कार्य प्रणाली है। इसकी स्वाभाविक प्रक्रिया के रूप में निजीकरण रोजगार सर्जन को कम करने तथा श्रमिकों से उनके रोजगार छीन कर उन्हें बेरोजगार बनाने वाले इस संरचनात्मक समायोजन कार्यक्रम की अत्यंत नाटकीय अभिव्यक्ति है।

सार्वजनिक क्षेत्र का विखण्डन

आत्म निर्भर विकास का मुख्य आधार सार्वजनिक क्षेत्र इसी लिए निजीकरण के इस उन्मादी अभियान के आक्रमण का प्रधान लक्ष्य रहा है। सार्वजनिक क्षेत्र की कमजोर इकाईयों से यह प्रक्रिया शुरू की गई। विश्व बैंक के दबाव में आकर सरकार ने बीमार औद्योगिक कम्पनियों सम्बन्धी अधिनियम (एस आइ सी ए) में संशोधन किया और सार्वजनिक क्षेत्र की बीमार इकाईयों को बी आइ एफ आर जिसे मूल रूप से निजी क्षेत्र की बीमार इकाईयों को पुनर्जीवित करने के लिए गठित किया गया था, के हवाले कर दिया गया। सरकार ने लगते हाथ इन इकाईयों के लिए पूरी बजट सहायता बंद कर दी। उसने जानबूझ कर यह कार्रवाई की है ताकि इन इकाईयों को बीमार किया जा सके, उनका बिस्तर ही गोल कर दिया जाए अथवा उनका निजीकरण किया जाए। इस उद्देश्य को सामने रख कर 98 इकाईयों की सूची तैयार की गई जिसके दुष्प्रभाव 9.4 लाख श्रमिकों के रोजगार पर पड़ा है।

कपड़ा उद्योग में सार्वजनिक क्षेत्र के राष्ट्रीय कपड़ा निगम की 53 मिलों पर बी आइ एफ आर में खतरे की तलवार लटक रही है क्योंकि भारत सरकार उनके ऋण माफ करने से इन्कार कर रही है। एन टी सी मिलों के आधुनिकीकरण के लिए विशेष त्रिपक्षीय समिति में हुए सर्वसम्मत समझौते को पावों तले रौंदा जा रहा है।

लाभ पर चलने वाले सार्वजनिक उपक्रमों जिन्होंने अन्तर्राष्ट्रीय मानक स्थापित किये हैं, में सरकार ने पूंजी विनिवेश शुरू कर दिया है; वह उनके शेयर निजी पार्टियों को मिट्टी के मोल बेच रही है। अब तक लगभग 18,000 करोड़ रुपये की परिसम्पत्ति का पूंजी विनिवेश किया जा चुका है और इस राशि का उपयोग प्रधानतया बजट घाटा दूर करने के लिए किया जा रहा है। इस प्रकार निजी शेयर धारकों का बी एच ई एल, इंडियन आयल, ओ एन जी जी सेल, भारत पेट्रोलियम, हिन्दुस्तान पेट्रोलियम, नेशनल फर्टिलाइजर्स, विदेश संचार निगम, महानगर टेलीफोन निगम जैसे सार्वजनिक क्षेत्र के विशाल उद्यमों में दखल हो गया है।

ध्यान देने योग्य बात यह है कि सरकार में बैठे सम्बन्धित महानुभावों (दूसरे शब्दों में उच्चाधिकारियों) द्वारा पहले से ही निश्चित किये गये खरीददारों (क्रेताओं) तथा बाजार में विद्यमान अन्य लोगों जिनके विदेशी निवेशक भी सम्मिलित हों, की लाभ पहुंचाने के लिए यह सारी खेल खेली जा रही है; सरकारी कोष को भरना उनका उद्देश्य कदापि नहीं है। भारत के महालेखा नियंत्रक (सी ए जी) ने इस प्रश्न पर सरकार को लम्बे हाथों लिया है। उसने अनमान लगाया है कि केवल वर्ष 1991 तथा 1992 में ही सार्वजनिक इकाईयों की बिक्री से प्राप्त होने वाले 3441.7 करोड़ रुपये के भारी-भरकम धन को वसूल ही नहीं किया गया था (दूसरे शब्दों में इसे सरकारी कोष की क्षति ही कहा जाएगा) और पूंजी विनिवेश की अगली दो किश्तों में सरकारी कोष को क्षति पहुंचाने वाली यह राशि लगभग तीन गुणा हो जाएगी। अभी हाल ही में संसदीय स्थायी समिति द्वारा कराए गए अध्ययन में अनुमान लगाया गया है कि वर्ष 1994-95 तक पूंजी विनिवेश की इस प्रक्रिया से सरकारी

(राज) कोष को 10,000 करोड़ रुपये की हानि होगी। इससे स्पष्ट पता चल जाता है कि सरकार में बैठे महानुभाव उच्च पदस्थ अधिकारी तथा मंत्री गण सार्वजनिक क्षेत्र द्वारा बनाई गई जनता की सम्पत्ति के साथ खिलवाड़ कर रहे हैं। ये हताशा भरी कार्रवाईयां वे निजी तथा विदेशी पूंजी के खरीदारों तथा स्वयं अपने आप को मालामाल करने के लिए ही कर रहे हैं। देश की अर्थव्यवस्था को लाभ पहुंचाना या उसे मजबूत करना इन महानुभावों का मनोरथ कदाचित नहीं है।

औद्योगिक बीमारी

इसी अवधि में निजी क्षेत्र में औद्योगिक बीमारी चौंका देने वाली सीमा तक बढ़ गई है। उसकी बीमार इकाईयों की संख्या 2.5 लाख से बढ़कर 5 लाख तक पहुंच चुकी है। क्योंकि औद्योगिक नीति का आधार बेरोकटोक निजीकरण है, इसलिए सरकार ने इस घोर सत्य की ओर से अपनी आंखें मूंद रखी हैं। एस आइ सी ए में संशोधन बी आइ एफ आर के माध्यम से निजी क्षेत्र की बीमार इकाईयों को पुनर्जीवित करने की अपेक्षा सार्वजनिक क्षेत्र पर हमले करने के लिए ही किया गया है। बीमार इकाईयों में काम करने वाले लगभग 50 लाख श्रमिकों पर इसका बुरा प्रभाव पड़ा है। फिक्की द्वारा कराए गए सर्वेक्षण के अनुसार मार्च 1994 तक इन बीमार इकाईयों की अनुमानित 50000 करोड़ रुपये की परिसंपत्ति इस बीमारी की भेंट चढ़ चुकी थी। इस परिसंपत्ति में उनके संयंत्रों तथा मशीनरी के साथ-साथ बैंकों के वे ऋण भी सम्मिलित हैं, जो उनकी ओर बकाया थे। अब तक इस आंकड़े में और अधिक वृद्धि हो चुकी है।

बेरोजगारी

इस अवधि में बेरोजगारी की व्याधि में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। इसके चलते ऐसी निराशाजनक स्थिति उत्पन्न हो चुकी है जिसने पूरे के पूरे समाजिक ताने-बाने को ही संकट में डाल दिया है। 1991 से पूर्व देश में 3.4 करोड़ लोगों पर बेरोजगारी की मार पड़ रही थी। वर्तमान में शहरी पंजीकृत बेरोजगारों की संख्या 4 करोड़ से अधिक हो चुकी है। ग्रामीण क्षेत्रों की तो बात ही जाने दीजिये। वहां लगभग 8 करोड़ लोग बेरोजगारी की विभीषिका को झेलने के लिए विवश हैं। और इस पर भी नरसिम्हा राव सरकार नये रोजगार उत्पन्न करने की माया की जाल फैला रही है। योजना आयोग ने स्वयं अनुमान लगाया है कि आठवीं पंचवर्षीय योजना के आरम्भ में रोजगार मांगने या चाहने वाले लोगों की संख्या 2.3 करोड़ थी। आठवीं तथा नौवीं पंचवर्षीय योजनाओं की अवधि में क्रमवार 3.5 तथा 3.6 करोड़ और लोग बेरोजगारों की पहले से ही लम्बी पंक्तियों में खड़े हो चुके हैं। वर्ष 2002 ईसवी तक रोजगार चाहने वाले लोगों की संख्या 9.4 करोड़ हो जाएगी।

इस पर भी नरसिम्हा राव सरकार डींगें हांक रही है कि इस शताब्दी के अंत तक वर्तमान में जारी संरचनात्मक समायोजन कार्यक्रम अर्थात् निजीकरण सम्बन्धी अभियान की बदौलत

बेरोजगारी जड़ से ही समाप्त हो जाएगी। इसके लिए प्रति वर्ष कम से कम एक करोड़ नये रोजगारों का सर्जन करने की आवश्यकता है! किन्तु प्रश्न उत्पन्न होता है कि आखिर ये रोजगार हैं कहाँ? श्रम मंत्रालय के आंकड़े (1994-95) दर्शाते हैं कि जब से नयी आर्थिक नीतियां अपनाई गई हैं संगठित क्षेत्र में रोजगार की विकास दर में निरंतर गिरावट आई है। वर्ष 1990-91 में यह विकास दर 1.44 प्रतिशत थी; वर्ष 1991-92 में 1.2 प्रतिशत और वर्ष 1992-93 में तो यह गिरते-गिरते 0.45 प्रतिशत तक पहुंच गई। वर्ष 1991-92 से रोजगार सर्जन के मामले में निजी क्षेत्र का योगदान शून्य से नगण्य रहा है। अतः जब सार्वजनिक क्षेत्र का विखण्डन किया जा रहा हो, उनका निजीकरण हो रहा हो तथा संगठित क्षेत्र सिकुड़ता चल रहा हो तब रोजगार से वंचित श्रमिक अपनी रोजी-रोटी कमाने के लिए विवश होकर असंगठित क्षेत्र की ओर रुख करने लगते हैं (या दूसरे शब्दों में कहें तो वे हैं), किन्तु यहां पर भी दुर्भाग्य उनका पीछा नहीं छोड़ता क्योंकि यह क्षेत्र तो पहले से ही आधे भूखे-आधे नंगे बेरोजगारों लोगों की भीड़ से अटा पड़ा है। इससे भी बढ़ कर कांग्रेस सरकार पूर्वतः न्यायोचित भूमि सुधारों का हठपूर्वक विरोध कर रही है जो रोजगार सर्जन तथा औद्योगिक विकास का आधार है। नयी आर्थिक नीतियों की सर्वाधिक मार गरीब किसानों पर पड़ी है। वे इस अवधि में अपनी बची-खुची सम्पत्ति से भी हाथ धो बैठे हैं। इसलिए नयी आर्थिक नीतियों के पांच वर्षों ने देश में बेरोजगारों की विराट सेना को बनाने की प्रक्रिया तेज कर दी है। इसके विपरीत राष्ट्र की मूल आवश्यकता नये-नये रोजगारों का सर्जन करना तथा काम के अधिकार को प्रत्येक नागरिक के मौलिक अधिकार के रूप में भारतीय संविधान में शामिल करना था (या है)।

निर्गम नीति

कोष-बैंक के दबाव में आकर सरकार ने अपनी इकाईयों को बंद कर देने तथा श्रमिकों को रोजगार से निकाल बाहर करने सम्बन्धी मालिक (नियोक्ता) के अधिकार को स्वीकार कर लिया है। इसे निर्गम नीति के रूप में जाना जाता है। सरकार औद्योगिक विवाद अधिनियम में संशोधन करके मालिकों के इस "अधिकार" को संवैधानिक मान्यता देने की सीमा तक भी चली गई। किन्तु श्रमिक संघों के बढ़ रहे प्रतिरोध के चलते सरकार आधिकारिक रूप से इसकी घोषणा करने का साहस नहीं कर सकी और न ही औद्योगिक विवाद अधिनियम में संशोधन कर रही है। किन्तु उसकी नीति की मुख्य दिशा किसी न किसी ढंग से श्रम शक्ति को कम करना ही है। सरकार ने तथाकथित राष्ट्रीय नवीकरण कोष योजना के माध्यम से इस नीति को कार्यरूप देने के लिए स्वैच्छिक सेवा निवृत्ति योजना का दांव चला है। बीमार इकाईयों को पुनर्जीवित करने के नाम पर वी आर एस के माध्यम से श्रमिकों को रोजगार से निकाल बाहर करने के लिए इस योजना का सारा पैसा खर्च किया जा रहा है। और इस मामले में भी सरकार के हमले का प्रमुख लक्ष्य सार्वजनिक क्षेत्र ही है। पहले ही सार्वजनिक उद्यमों से स्वैच्छिक सेवा निवृत्ति योजना के द्वारा लगभग 80,000 श्रमिकों का रोजगार छीना

जा चुका है। केवल एन टी सी मिलों के ही लगभग 40,000 श्रमिकों को नौकरी से निकाल दिया गया है। सी आइ टी यू ने वी आर एस को समाप्त करने और आधुनिकीकरण के लिए इसके धन का उपयोग करने की मांग की है। किन्तु कांग्रेस सरकार तो अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के प्रति वचनबद्ध है और वह उसकी स्वीकृति प्राप्त किये बिना एक कदम भी आगे नहीं बढ़ा सकती।

आसमान को छूते मूल्य

बेरोजगारी की भांति अनिवार्य उपभोक्ता वस्तुओं के आसमान को छूने वाले मूल्य भी एक ऐसा कारक हैं जिसमें पिछले पांच वर्षों की अवधि में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। कांग्रेस (इ) ने 1991 के अपने चुनाव घोषणा पत्र में मूल्य वृद्धि पर पता नहीं कितने घड़ियाली आंसू बहाए थे और उसने 100 दिनों के भीतर मूल्यों को जुलाई 1990 के स्तर पर लाने का आश्वासन दिया था। इस लक्ष्य की प्राप्त करने के लिए आर्थिक नीतियों को कार्यरूप देने की गति तेज कर दी गई थी। किन्तु वास्तविक स्थिति क्या है? पिछले पांच वर्षों की अवधि में सभी अनिवार्य उपभोक्ता वस्तुओं के मूल्य 1991 के स्तर से दोगुणा हो चुके हैं। आर्थिक सर्वेक्षण 1995-96 में प्रकाशित सरकारी आंकड़ों के अनुसार भी औद्योगिक श्रमिकों के लिये उपभोक्ता मूल्य सूचकांक में 1991 से अगस्त 1995 के मध्य 991 से 1691 तक वृद्धि हुई है जबकि उसी अवधि में (1960=100) खेत मजदूरों के लिए यह सूचकांक 858 से उछल कर 1405 के अंक तक जा पहुंचा है। और ये आंकड़े मूल्य वृद्धि की वास्तविक स्थिति पर पर्दा डालने के लिए गढ़े गए। कृत्रिम आंकड़े मात्र हैं। वास्तव में मूल्य वृद्धि इससे भी कहीं अधिक हुई है। पिछले पांच वर्षों के अनुभव ने प्रमाणित कर दिया है कि इस नीति का एक सर्वाधिक घिनावना पक्ष तथाकथित उदारीकरण है। बाजार अर्थ व्यवस्था के अन्तर्गत जन साधारण को अपनी आवश्यकता की प्रत्येक वस्तु के लिए आसमान को छूने वाला मूल्य चुकाना ही पड़ेगा। सरकार ने बैंक-कोष के आदेशों का पालन करते हुए बजट घाटे को 5 प्रतिशत तक कम करने के लिए सब्सिडियों में कमी कर दी है; पिछले सभी रिकार्ड तोड़ते हुए मूल्यों में भारी वृद्धि कर दी है; मूल्यों को और बढ़ा कर रुपये का अवमूल्यन कर डाला है, आबकारी शुल्क तथा अन्य कर बढ़ा दिये हैं; इसके फलस्वरूप पहले से ही आकाश की ऊंचाइयों को छू रहे मूल्य और भी बढ़ गए हैं। यह सब जानबूझ कर जन वितरण प्रणाली को ध्वस्त करने के उद्देश्य से किया जा रहा है। राशन की दुकानों पर या तो अनिवार्य उपभोक्ता वस्तुएं मिलती ही नहीं और यदि मिलती भी हैं तो 1991 के मूल्य स्तर से दो गुणा दामों पर। इसके चलते समाज के गरीब वर्गों में अत्यंत भयानक स्थिति उत्पन्न हो गई है।

अनाज, दालें, सब्जियां, तेल, चीनी तथा यहां तक कि नमक जैसी सामान्य जन साधारण के उपभोग की सभी अनिवार्य वस्तुओं के मूल्य दोगुणा से भी अधिक हो गए हैं वहीं अमीर वर्गों द्वारा रेफ्रीजरेटर, मोटर वाहनों, टीवी सेटों, सौन्दर्य प्रसाधनों इत्यादि ऐश्वर्य की वस्तुओं

के मूल्यों में उसी दर से वृद्धि नहीं हुई है। इस तथ्य की ओर विशेष ध्यान दिये जाने की आवश्यकता है। इसके चलते नरसिम्हा राव सरकार का वर्गीय दृष्टिकोण उभर कर सामने आ गया है।

उपरोक्त उपभोक्ता वस्तुओं के मूल्यों में वृद्धि के साथ-साथ रेलवे के किराए तथा भाड़े, पेट्रोल तथा डीजल, उर्वरकों, रसोई गैस तथा इजारेदार घरानों द्वारा निर्मित वस्तुओं के मूल्यों को भी निरंतर बढ़ाया जाता रहा है। यह सूची कभी समाप्त होने वाली नहीं है। इसकी प्रतिक्रिया दर प्रतिक्रिया मूल्यों में और वृद्धि हुई है। संदेह नहीं कि उदारीकरण की नीति के अन्तर्गत यह भ्रष्ट नौकरशाहों, बड़े इजारेदार घरानों एवं व्यापारियों की कार्यप्रणाली बन चुकी है ताकि वे लोगों की खाल उतार (बुरी तरह लूट सकें) सकें और उनकी क्रय शक्ति में जबरदस्त कमी लाकर उन्हें दो जून के खाने के लिए मोहताज बना सकें और ऐसा अनर्थ बेरोकटोक होने देना नरसिम्हा राव सरकार की कार्य प्रणाली है। सर्वव्यापी मूल्य वृद्धि तथा बेरोजगारी ने जनता के जीवन की आभा को ही समाप्त करके रख दिया है।

असंगठित क्षेत्र

पिछले पांच वर्षों में नरसिम्हा राव सरकार ने असंगठित क्षेत्र के लिए असंख्य घड़ियाली आंसू बहाए हैं। यह वह क्षेत्र है जिसमें 95 प्रतिशत से भी अधिक श्रम शक्ति जुटी हुई है और इस श्रमशक्ति का लगभग 70-80 प्रतिशत भाग कामकाजी महिलाओं का है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् कांग्रेस सरकार द्वारा विकास के पूंजीवादी मार्ग को अपनाए जाने के चलते श्रमिकों की विशाल बहुसंख्या अल्प वेतनों पर निर्भर रही है और उसकी सहायता के लिए श्रम कानूनों अथवा सामाजिक सुरक्षा के उपायों को भी लागू नहीं किया गया।

1991 की नयी औद्योगिक नीति के लागू होने पर सरकार ने उन वस्तुओं के आरक्षण की नीति समाप्त कर दी है जिन्हें पहले केवल लघु उद्योगों के क्षेत्र में ही तैयार किया जा सकता था। अब देशी तथा विदेशी इजारेदारों को भी इस क्षेत्र में प्रविष्ट होने की अनुमति दे दी गई है। यह वही क्षेत्र है जो निर्यात की जाने वाली लगभग 40 प्रतिशत भारतीय वस्तुओं का उत्पादन करता है। संरचनात्मक समायोजन कार्यक्रम का प्रमुख लक्षण जो पहले ही दिखाई देने लगा था, यह है कि बड़े व्यावसायिक घरानों ने अपने आकार को कम करना शुरू कर दिया है, उन्होंने अपने अधिकांश रोजगार अनुबंध पर (ठेके पर) लघु उद्योगों के क्षेत्र को दे डाले हैं। इसके परिणामस्वरूप इन छोटी इकाईयों में श्रमिकों के अत्यंत अल्प वेतनों, कम कामकाजी पूंजी, श्रम कानूनों की धजियां उड़ाने तथा इन इकाईयों के श्रमिकों के लाभ हेतु सुरक्षा कदम के चलते और उनके साथ साथ उठाने अथवा सामाजिक सुरक्षा के उपाय न करने से मिली खुली छूट के कारण उनके लाभ भारी भरकम हो गए हैं। इस प्रक्रिया के चलते असंगठित क्षेत्र में श्रमिकों की भीड़ बढ़ गई है और उनके रोजगार की गुणवत्ता में भारी कमी आ गई है। सरकार के अपने आंकड़ों के अनुसार वर्ष 1991 में भारत की लगभग 85 प्रतिशत श्रम शक्ति असंगठित क्षेत्र में थी। संरचनात्मक समायोजन कार्यक्रम की 'कृपा' से

वर्ष 1995 में वह बढ़कर 92.6 प्रतिशत हो गई। श्रमिकों की इस विशाल बहुसंख्या को गरीबी की रेखा से भी नीचे के वेतन मिलते हैं। सी आइ टी यू तथा अन्य ट्रेड यूनियनों द्वारा 15वें भारतीय श्रम सम्मेलन में लिए गए निर्णय के अनुसार आवश्यकता पर आधारित वेतन देने के लिए निरंतर मांग करने पर भी सरकार ने उसे स्वीकार नहीं किया है जबकि वह स्वयं भी भारतीय श्रम सम्मेलन का एक पक्ष है। देश में न्यूनतम वेतन निर्धारित करने के लिए कोई कसौटी नहीं बनाई गई। आइ एल ओ कन्वेंशन के अनुसार सरकार ने इस कसौटी को बनाने के लिए एक केन्द्रीय न्यूनतम वेतन सलाहकार बोर्ड का गठन किया था। किन्तु नरसिम्हा राव के शासनकाल में यह बोर्ड मृतप्रायः हो गया और इस अवधि में उसकी एक भी बैठक बुलाई नहीं गई। अतः आवश्यकता पर आधारित वेतन का निर्धारण करने की कोई कसौटी नहीं होने के कारण लाखों-लाख श्रमिक गरीबी की रेखा के नीचे रह रहे हैं। अतः इस क्षेत्र में और अधिक श्रम शक्ति को धकेल कर नरसिम्हा राव सरकार ने गरीबी एवं दरिद्रता के क्षेत्र को व्यापक ही बनाया है। इस क्षेत्र में इजारेदारानों का प्रवेश होने के दुष्परिणाम स्वरूप अनेक छोटी इकाईयां बंद हो गई हैं तथा रोजगारहीनता की स्थिति उत्पन्न हो गई है। गरीबी की रेखा के नीचे रहने वाले लोगों की संख्या में कमी लाने सम्बन्धी नरसिम्हा राव सरकार का दावा कोरा झूठ है। इसका प्रमाण हमें असंगठित क्षेत्र की भयानक स्थितियों तथा बेरोजगारी में दिन प्रतिदिन होती चली जा रही वृद्धि को देखने से ही मिल जाता है। सत्य तो यह है कि संरचनात्मक समायोजन कार्यक्रम ने पहले से ही गरीब परिवारों का और अधिक दरिद्रीकरण कर दिया है, इन परिवारों की संख्या बढ़ी है, और तो और अब इनके बच्चों को भी जीवित रहने के लिये संघर्ष करना पड़ रहा है। बाल मजदूरी की संवृति इस अवधि में बढ़ती ही चली जा रही है।

असंगठित क्षेत्र में सबसे बड़े उद्योगों में से एक हथकरघा उद्योग में लगभग 90 लाख बुनकर काम करते हैं। ये बुनकर इन दिनों संकटपूर्ण स्थितियों में से गुजर रहे हैं। इन पांच वर्षों की अवधि में संगठित मिलों में कामबंदी होने तथा एन टी सी मिलों के विखण्डन के चलते इन बुनकरों को पर्याप्त मात्रा में लच्छी धागा नहीं मिलता जिससे कि वे अपनी आजीविका कमा सकें। उन्हें निजी क्षेत्र से भारी मूल्य देकर लच्छी धागा लेना पड़ता है। पिछले कुछ वर्षों इन श्रमिकों द्वारा आत्म हत्याएं किये जाने के अनेक समाचार सुनने को मिले हैं।

इस प्रकार असंगठित क्षेत्र का एक और बड़ा उद्योग बीड़ी का है। इस उद्योग में काम करने वाले लगभग 70 लाख श्रमिकों को गम्भीर संकट की दलदल में धकेला जा चुका है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की सहायता करने के लिये सरकार ने उनके द्वारा बनाई जाने वाली छोटी सिगरेटों पर आबकारी शुल्क को 50 प्रतिशत कम कर दिया है ताकि वे इस विशाल बाजार पर कब्जा कर सकें। इन बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने पहले ही 30 प्रतिशत बीड़ी बाजार पर कब्जा कर लिया है। अनेक राज्यों में श्रमिकों को सप्ताह में केवल दो-तीन दिन के लिये ही काम मिलता है। अनेक बीड़ी निर्माताओं ने अपनी श्रम शक्ति में 15 प्रतिशत तक कमी कर दी है।

विदेशी हितों के समक्ष हमारी राष्ट्रीय सम्पदा को समर्पित कर देने की एक और निर्लज्जता भरी उदाहरण हमारी सामूहिक सम्पदा के क्षेत्र में देखी जा सकती है। सरकार ने बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को भारतीय समृद्ध में मछलियां पकड़ने की अनुमति दे दी है इसके चलते हमारे देश के हजारों मछेरों का जीवन संकट में पड़ गया है।

यह एक तथ्य है कि इस विशाल असंगठित क्षेत्र में श्रमिकों को कानूनी (या संवैधानिक) संरक्षण प्राप्त नहीं है और न ही उन्हें कानूनी तौर पर न्यूनतम वेतन दिये जाते हैं, इस पर भी सरकार ने उनके लिये केन्द्रीय कानून बनाने या लागू करने से इन्कार कर दिया है। इसी प्रकार खेत मजदूरों के लिये भी केन्द्रीय कानून नहीं बनाया है, यद्यपि इस सम्बन्ध में राष्ट्रीय मोर्चा सरकार द्वारा पहले ही एक विधेयक तैयार किया जा चुका था। निर्माण के क्षेत्र में भी मालिकों को लाभ पहुंचाने के लिये एक प्रतिगामी विधेयक लाया गया था। यह दूसरी बात है कि श्रमिक संघों तथा अन्य संगठनों द्वारा तीखा विरोध किये जाने के कारण यह विधेयक पारित ही नहीं हो सका। उसी प्रतिगामी विधेयक को अध्यादेश के माध्यम से लागू किया गया और ऐसा करते समय श्रमिक संघों द्वारा दिये गए सकारात्मक सुझावों पर विचार करने की आवश्यकता ही नहीं समझी गई।

ट्रेड यूनियन अधिकारों पर हमले

कांग्रेस सरकार ने 1994 में भारतीय ट्रेड यूनियन अधिनियम में संशोधन करने के लिये एक विधेयक संसद में प्रस्तुत किया। सरकार की इस कार्रवाई का उद्देश्य अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष तथा विश्व बैंक के अपने आकाओं को प्रसन्न करना, शोषण एवं उत्पीड़न के विरुद्ध संघर्षरत ट्रेड यूनियन आंदोलन को पंगु बनाना और श्रमिकों के ट्रेड यूनियन अधिकारों में कटौती करना था। इसके अन्तर्गत ट्रेड यूनियनों के पंजीकरण पर भी प्रतिबंध लगाने और पंजीकरण अधिकारी को ट्रेड यूनियनों की सामान्य गतिविधियों या कार्यों में हस्तक्षेप करने के लिये मनमानी शक्तियां देने का प्रावधान रखा गया था। ट्रेड यूनियनों तथा वाम पक्षीय दलों के साथ सम्बन्ध रखने वाले सांसदों द्वारा तीव्र प्रतिकार किये जाने के फलस्वरूप वह विधेयक संसद में पारित नहीं हुआ।

कांग्रेस सरकार ने बार-बार औद्योगिक सम्बन्धों के बारे में कानून बनाने का प्रयास किया है ताकि वह औद्योगिक सम्बन्धों सम्बन्धी पूरे तंत्र को नियंत्रित करने के लिये औद्योगिक सम्बन्धों पर एक आयोग का गठन कर सके। यह तंत्र पूरे औद्योगिक सम्बन्धों को ही ठप्प करके रख देगा और हड़ताल करने के श्रमिकों के अधिकार को कम कर देगा। यह विधेयक जहां श्रमिकों तथा उनके संगठनों पर जांच-पड़ताल करने के नाम पर अनेक प्रतिबंध लगाता था वहीं मालिकों को और अधिक शक्तियां प्रदान करता था ताकि वे जब चाहें श्रमिकों को काम पर रखें और जब चाहें उन्हें काम से निकाल बाहर करें। यह विधेयक अस्पताल कर्मचारियों, शिक्षण संस्थानों तथा ऐसे ही अनेक उपक्रमों में काम करने वाले श्रमिकों को किसी भी प्रकार के ट्रेड यूनियन अधिकार नहीं देता। सरकार तथा मालिकों के संगठन श्रम

संगठनों की तथाकथित कठोरता को समाप्त करने और जब चाहे श्रमिकों को काम पर रखने तथा जब चाहे उन्हें निकाल बाहर करने के लिये मालिकों को अधिकार देने के नाम पर वर्तमान श्रम कानूनों को ही समाप्त कर देने के लिये निरंतर प्रयास करते रहे हैं। वे लोग चाहते हैं कि सरकार औद्योगिक विवाद अधिनियम के उन वर्तमान प्रावधानों को ही समाप्त कर दें जिनके कारण उन्हें अपने श्रमिकों की छंटनी करने के लिये सरकार से पूर्व अनुमति लेनी पड़ती है।

सम्पूर्ण ट्रेड यूनियन आंदोलन के कड़े प्रतिरोध के कारण ही सरकार अपनी इस घिनावनी खेल में सफल नहीं हो सकी। श्रमिकों ने विभिन्न आंदोलन तथा संघर्ष करके इस विधेयक का तीव्र विरोध किया था। सरकार वर्तमान ट्रेड यूनियन तथा श्रम कानूनों को भी सहन नहीं कर रही जबकि उनकी भी अनेक सीमाएं हैं और यह बात मालिकों के पक्ष में जाती है। इससे श्रमिक आंदोलन पर अंकुश लगाने सम्बन्धी नरसिम्हा राव सरकार के असल मनसूबे बेनकाब हो जाते हैं। वे लोग (राव सरकार) सम्पूर्ण श्रमिक वर्ग के सारे अधिकार छीन कर उसे दासत्व की भट्टी में झोंक देना चाहते हैं ताकि वे आसानी से इजारेदार तथा विदेशी पूंजी की भारी-भरकम लाभ कमाने की लालसा को पूर्ण कर सकें क्योंकि वही लोग वर्तमान केन्द्रीय सरकार के असल आका है। विदेशी निवेशक हमारे देश के आंतरिक मामलों में अत्याधिक हस्तक्षेप करते हैं किन्तु इस पर भी कांग्रेस सरकार उन्हें प्रसन्न करने के चक्कर में रहती है; उनकी निंदा करना तो दूर की बात है; वह उन्हें भारत के श्रम कानूनों को अधिक 'लचीले' बनाने के आश्वासन दे रही है।

कांग्रेस सरकार ने केन्द्रीय सरकार के कर्मचारियों के संगठनों को मान्यता देने के लिये नये कानून बनाए हैं। इन कानूनों के अन्तर्गत इन संगठनों पर अनेक अपमानजनक शर्तें लाद दी गई हैं तथा उनके ट्रेड यूनियन अधिकारों पर धावा बोला गया है। यहां तक कि ट्रेड यूनियन पत्रिकाओं की भी केन्द्रीय सरकार द्वारा जांच की जाती है और सरकारी नीतियों की खुली आलोचना को सेंसर किया जाता है। सी आइ टी यू तथा अन्य ट्रेड यूनियनों द्वारा इस सम्बन्ध में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के पास शिकायत की गई है किन्तु केन्द्रीय सरकार मामले को लटकाए रखने की चालें चल रही है; वह संगठन बनाने की स्वतंत्रता की अवधारणा तथा सामूहिक सौदेबाजी करने के श्रमिकों के अधिकारों के उल्लंघन की कार्रवाइयों की जांच सम्बन्धी आइ एल ओ के कार्यों में बाधाएं उत्पन्न कर रही है।

कामकाजी महिलाएं

पिछले पांच वर्षों में कामकाजी महिलाओं के कष्टों में अपार वृद्धि हुई है। श्रमिक संगठनों द्वारा कामकाजी महिलाओं को उनके पुरुष सहयोगियों के समान वेतन देने के लिये निरंतर मांग किये जाने पर भी उनके विरुद्ध भारी पक्षपात किया जाता है। प्रसूति अवकाश तथा शिशु पलना गृहों की उनकी विशिष्ट मांगों पर कभी विचार नहीं किया गया जबकि नरसिम्हा राव सरकार इस सम्बन्ध में बड़ी-बड़ी डींगें हांकने से भी संकोच नहीं कर रही

है। संरचनात्मक समायोजन कार्यक्रम का सर्वाधिक दुष्प्रभाव कामकाजी महिलाओं पर पड़ा है। असंगठित क्षेत्र में दिन-प्रतिदिन उनका दरिद्रीकरण हो रहा है जबकि संगठित क्षेत्र में वे छंटिनियों तथा स्वैच्छिक सेवा निवृत्ति योजना जैसी पैशाचिक कार्रवाईयों का पहला लक्ष्य बनती हैं। लाखों आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं तथा सहायिकाओं का भाग्य पहले की भांति त्रासद बना हुआ है; उन्हें अत्यंत अल्प वेतन (सरकार के शब्दों में मानदेय) दिया जाता है, और सरकारी कर्मचारियों के रूप में उन्हें मान्यता भी नहीं दी जाती। इन महिलाओं का लैंगिक उत्पीड़न किया जाता है; उन पर अत्याचार किये जाते हैं; पिछले पांच वर्षों में इन घटनाओं में चौंका देने वाली सीमा तक वृद्धि हुई है।

पेंशन का धोखा

आगामी चुनावों में श्रमिक वर्ग के मतों पर गिद्ध दृष्टि डालते हुए सरकार ने एक अध्यादेश के माध्यम से पेंशन योजना लागू की है। किन्तु इस मामले में भी धोखादेही से काम लिया गया है। श्रमिक वर्ग लम्बे समय से भविष्य निधि तथा ग्रेच्युटी के साथ-साथ सेवा निवृत्ति के तीसरे लाभ के रूप में पेंशन देने की मांग करता रहा है। इसके विपरीत सरकार ने श्रमिकों के भविष्य निधि के लगभग आधे अंशदायी भाग को हड़प लिया है अर्थात् उसने मालिकों के पूरे भाग को ही भविष्य निधि से निकाल कर पेंशन निधि में डाल दिया है। ऐसा जानबूझ कर किया गया है ताकि मालिकों तथा सरकार को श्रमिकों की पेंशन में योगदान देने को बोझ से मुक्ति दिलाई जा सके और जहां तक सम्भव हो सके पेंशन का धोखा देकर श्रमिकों के धन से बजट घाटा पूरा किया जा सके। यह खेल पूर्णतया नयी नीतियों के अनुसार खेला जा रही है। यह खेल है श्रमिकों को जी भर कर लूटो, मालिकों एवं सरकार को किसी प्रकार की वित्तीय प्रतिबद्धता के बोझ से मुक्त कर दो और अन्य सभी स्रोतों से बजट घाटा पूर्ण करो। दुर्भाग्यवश ट्रेड यूनियन नेताओं का एक वर्ग सरकार के इस धोखे में आ गया है। किन्तु सी आइ टी यू द्वारा दृढ़ रुख अपनाए जाने के कारण श्रमिक वर्ग ने पेंशन योजना के विरुद्ध 23 फरवरी की हड़ताल को जबरदस्त प्रत्युत्तर देकर इस युद्ध में सरकार की पीठ लगा दी है। तथापि सरकार ने श्रमिकों की जेब में डाका डालने का निश्चय कर रखा है। इसी लिए उसके द्वारा तीसरी बार अध्यादेश जारी किया है क्योंकि संसद के पिछले दो सत्रों में पेंशन विधेयक पारित नहीं हो सका। यह भी एक तथ्य है कि अनेक उच्च न्यायालयों ने अनेक औद्योगिक इकाईयों में पेंशन अध्यादेश के पालन पर रोक लगा दी है। यदि श्रमिक वर्ग कठोर संघर्षों के फलस्वरूप प्राप्त किये गए अपने अंशदायी भविष्य निधि को बचाना चाहता है, यदि वह चाहता है कि उसे सेवा निवृत्ति के तीसरे लाभ के रूप में पेंशन मिले तथा पेंशन को भविष्य निधि के साथ सम्बद्ध न किया जाए तो उसे लोक सभा के आगामी चुनावों में इन श्रमिक विरोधी नीति निर्धारकों तथा उनके सहगण-भाजपा को समुचित एवं कड़ा प्रत्युत्तर देना होगा।

श्रमिकों को सेवा निवृत्ति के तीसरे लाभ के रूप में पेंशन से वंचित करने के अतिरिक्त

नरसिम्हा राव सरकार ने बोनस तथा ग्रेच्युटी भुगतान पर लगी सीमा को समाप्त करने से भी इन्कार कर दिया है। सभी श्रमिक संगठन पिछले अनेक वर्षों से इसकी मांग निरंतर करते रहे हैं।

ऋण जाल का अटल खतरा

भारत द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष से राष्ट्र विरोधी शर्तों पर ऋण लिये जाने की परिणति हमारी अर्थिकता की वर्तमान दुरावस्था तथा नयी आर्थिक नीतियों के रूप में हुई है। ट्रेड यूनियन आंदोलन, वाम तथा लोकतांत्रिक दलों और अन्य देश भक्त शक्तियों ने लातिनी अमरीका तथा अफ्रीका में अन्य तृतीय विश्व के देशों के कटु अनुभवों के दृष्टिगत सरकार को इस विषाक्त ऋण जाल में नहीं फंसने की चेतावनी दी थी किन्तु सरकार ने उस समय छाती ठोक कर जोरदार घोषणा की थी कि यह ऋण तो भुगतान संतुलन के संकट (तत्कालीन) पर काबू पाने के लिये लिया गया है। पिछले पांच वर्षों के अनुभवों ने इस तथ्य को उभार कर रख दिया है कि भारत इस ऋण जाल में फंसने ही जा रहा है। इस ऋण की शर्तें हमारी आर्थिक प्रभुसत्ता तथा आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था की राष्ट्रीय योजनाबंदी को ही चट कर जाएंगी। पिछले पांच वर्षों में भारत पर विदेशी ऋण 600,000 करोड़ रुपये से भी ऊपर हो चुका है। ऋण सेवाओं की दर तेजी के साथ खतरे की सीमा की ओर बढ़ रही है। यह वर्ष 1993 में 30 प्रतिशत थी। उसके पश्चात् स्थिति और तेजी के साथ खराब हो चुकी है। उदाहरणार्थ 1994 तथा 1995 में भारत की सकल विदेशी ऋण की प्राप्ति ऋण सेवाओं के भुगतान से कहीं कम थी और जनवरी 1995 के अंत तक जब वास्तविक प्राप्ति 7152 करोड़ रुपये की थी, तब ऋण मूल धन तथा ब्याज 9730 करोड़ रुपये था। आंतरिक ऋण की स्थिति भी वैसी ही चौंका देने वाली है। व्यापार के क्षेत्र में उदारीकरण की नीति के स्वाभाविक परिणाम के अनुसार निर्यातों की अपेक्षा आयात तीव्र गति के साथ बढ़ रहे हैं। राज सिंहासन छोड़ते-छोड़ते कांग्रेसी शासकों ने देश को एक भयावह स्थिति में धकेल दिया है। पिछले वर्ष के 1.8 करोड़ डालर की तुलना में वित्तीय वर्ष 1995-96 के पिछले ग्यारह मास में भारत का व्यापार घाटा तेजी के साथ बढ़कर 4.3 करोड़ डालर तक जा पहुंचा है। और इस पर भी नरसिम्हा-मनमोहन की जोड़ी पागलों की भांति बैंक-कोष के स्वर में मिला कर उसके राग का अलाप कर रही है। साम्राज्यवादी वित्तीय इजारेदारों के समक्ष देश की सम्प्रभुता को गिरवी रखने तथा राष्ट्र के साथ धोखादेही की यह चरम सीमा है। इसका एकमात्र इलाज यही है कि श्रमिक वर्ग इसे सत्ता से निकाल बाहर फेंक दे।

निजी क्षेत्र के बढ़ते लाभ

जहां हमारी अर्थिकता की स्थिति अत्यंत दयनीय बनी हुई है; देश तेजी के साथ विदेशी ऋण जाल में फंसता चला जा रहा है; बेरोजगारी बढ़ रही है; उपभोक्ता वस्तुओं के मूल्य आकाश की ऊंचाईयों से भी ऊपर जा चुके हैं; औद्योगिक बीमारी बढ़ रही है और औद्योगिक

इकाईयों में बेरोकटोक कामबंदी हो रही है; देश की जनता के विशाल वर्ग भीषण दरिद्रता की चक्की में पिस रहे हैं वहीं इजारेदार घरानों के लाभ बड़ी-बड़ी छलांगे लगाते हुए बढ़ रहे हैं। वर्ष 1993-95 की अवधि में 20 शिखर औद्योगिक घरानों की परिसम्पत्तियों में लगभग 70 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। यदि भारत में उदारीकृत अर्थव्यवस्था में इजारेदार घरानों द्वारा अर्जित लाभों की यह स्थिति है तो कोई भी व्यक्ति सहज ही उस स्थिति में विदेशी बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की लूट की कल्पना कर सकता है जो उनके द्वारा अर्थव्यवस्था का भूमण्डलीकरण हो जाने पर मचाई जाएगी। राव सरकार को इस प्रश्न का उत्तर देना ही होगा।

प्रतिगामी तथा साम्प्रदायिक भाजपा-शिव सेना गठबंधन

जहां भाजपा-शिव सेना गठबंधन 'स्वदेशी' का राग अलाप रहा है वहीं कांग्रेस कोई और राग गा रही है। वस्तुतः ये दोनों ही एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। भाजपा-शिव सेना गठबंधन जहां राव सरकार की आर्थिक नीतियों पर ही चल रही है वहीं उसने अपनी साम्प्रदायिक विचारधारा की टोपी को भी ओढ़ रखा है। यह गठबंधन प्रतिगामी राजनीति तथा अर्ध-फासी कार्रवाईयां करता है और धर्म के नाम पर देश के टुकड़े कर देना चाहता है। वर्गीय दृष्टिकोण से यह गठबंधन भी कांग्रेस (इ) की भांति बुर्जुआ-सामंतवादी वर्गों का प्रतिनिधित्व करता है। राजनीतिक अर्थों में यह गठबंधन उस वर्ग के अत्यंत प्रतिगामी तथा साम्प्रदायिक वर्गों का प्रतिनिधि है। यह गठबंधन आधिकारिक रूप से न केवल कांग्रेस (इ) की आर्थिक नीतियों का समर्थन करता है अपितु उससे भी आगे जाकर वह सत्ता में आने पर सभी राज्यों में निजीकरण का अभियान चलाने की बातें करता है। यद्यपि उन्होंने विभिन्न अवसरों पर सरकार की आर्थिक नीतियों की आलोचना की है तथापि उन्होंने नयी आर्थिक नीतियों के विरुद्ध चलने वाले सभी संघर्षों तथा आंदोलनों से स्वयं को दूर रखा है। एनरों का संदिग्ध धोखा इसकी ज्वलंत उदाहरण है। सत्ता में आने से पूर्व तथा सत्ता में आने के पश्चात् इस प्रश्न पर इस गठबंधन ने गिरगिट की भांति कैसे अपना रंग बदला, यह देखते ही बनता है। दूसरी ओर कांग्रेस (इ) ने इस गठबंधन के प्रति समझौतावादी तथा तुष्टीकरण की नीति अपनाई हुई है।

संघ परिवार ने अपनी साम्प्रदायिक तथा हिन्दुत्ववादी शाखा-प्रशाखाओं को अल्पसंख्यक मुसलिम समुदाय के विरुद्ध घृणा अभियान में झोंक रखा है। वह देश के टुकड़े-टुकड़े कर देना चाहता है। श्रमिक वर्ग, जनता तथा पूरा देश दिन-दिहाड़े बाबरी मसजिद के जघन्य ध्वंस, आडवानी की कुख्यात रथयात्रा तथा उसके पश्चात् होने वाले साम्प्रदायिक दंगों को कभी भुला नहीं सकता। इन दंगों का श्रमिक वर्ग के अत्यंत महत्वपूर्ण केन्द्रों पर भी दुष्प्रभाव पड़ा था।

इस परिवार ने भारतीय संविधान में निहित साम्प्रदायिक सौहार्द और देश की एकता तथा अखण्डता पर निर्लज्जतापूर्वक अत्यंत निंदनीय हमला किया है। उसकी ये आक्रमणकारी कार्रवाईयां अभी भी जारी हैं और उसका लक्ष्य तथा उद्देश्य भी यही है। कश्मीर समस्या पर

उसका रुख सर्वविदित है।

यदि ये महानुभाव सत्ता में आए तो क्या करेंगे, इसका प्रदर्शन वे पहले ही महाराष्ट्र में कर चुके हैं। वहां पर इन्होंने राज्य अल्पसंख्यक आयोग, उर्दू अकादमी, हज समिति का बिस्तर गोल कर दिया है और बम्बई के दंगों की जांच कर रहे श्री कृष्ण आयोग को समाप्त कर दिया है।

जहां पिछले पांच वर्षों का लेखा जोखा यह दर्शाता है कि कांग्रेस (इ) देश को बेच डालना चाहती है वहीं भाजपा-शिव सेना तथा समग्र रूप में संघ परिवार देश का विभाजन कर देने पर तुला हुआ है। दोनों अपने-अपने ढंग से साम्राज्यवादियों की सहायता कर रहे हैं। दोनों श्रमिक वर्ग तथा जनता द्वारा ठुकरा दिये जाने के पात्र हैं।

सर्वव्यापी भ्रष्टाचार

उदारीकरण के ये दोनों समर्थक कांग्रेस (इ) तथा भाजपा भ्रष्टाचार की गंदगी से दूषित हो चुके हैं। इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है। घोटालों की श्रृंखलाओं ने न केवल पूरे देश को झकझोर कर रख दिया है अपितु उन्होंने विश्व के सभी पुराने रिकार्ड तोड़ डाले हैं। अब इन गड़े मुर्दों की दुर्गंध आने लगी है। बोफोर्स घोटाला, प्रतिभूति घोटाला, दूरसंचार घोटाला, सेंट किट्स धोखादेही, सार्वजनिक क्षेत्र के पूंजी विनिवेश का घोटाला, चीनी घोटाला, आयात निर्यात घोटाला, बेलाडिला घोटाला, तथा अब हवाला कांड और इन सबके साथ चन्द्रास्वामी तथा दाउद इब्राहिम कांड, इत्यादि कितने ही नाम इस सम्बन्ध में लिये जा सकते हैं। यह सूची कभी समाप्त होने वाली नहीं है और यह तो बर्फ की मात्रा एक डली ही है। भ्रष्टाचार की इन सभी घोर कार्रवाईयों में न केवल बड़े उच्चाधिकारी तथा केन्द्रीय मंत्री अपितु स्वयं प्रधानमंत्री भी संलिप्त हैं। हिन्दुत्व के समर्थक शिखर नेता एल के आडवानी स्वयं भी इनमें संलिप्त हैं। विडम्बना तो यह है कि जो लोग साम्राज्यवाद के विरुद्ध देश के स्वतंत्रता संग्राम का नेतृत्व करने की डींगें हांकते रहे हैं और जो सत्ता प्राप्त करना चाहते हैं आज स्वयं वही लोग समाज के अत्यंत भ्रष्ट लोगों (या नेताओं) के रूप में बेनकाब हो चुके हैं।

वाम मोर्चा सरकारों की शानदार उदाहरण

श्रमिक वर्ग तथा परिश्रमी जनता के समक्ष पश्चिम बंगाल तथा त्रिपुरा और इससे पूर्व केरल की वाम मोर्चा सरकारों की शानदार उदाहरण है। यह उदाहरण उनके लिये प्रकाश स्तम्भ का काम देती है। इन सरकारों ने सरकारी तथा पुलिस कर्मचारियों सहित सम्पूर्ण कर्मचारी वर्ग को ट्रेड यूनियन अधिकार प्रदान किये हैं। उन्हें हड़ताल करने के अधिकार की गारंटी दी है। इन्होंने नयी आर्थिक नीतियों के विरुद्ध चले सभी आंदोलनों तथा देशव्यापी हड़ताल की कार्रवाईयों का समर्थन किया है। उन्हें साहस के साथ दृढ़तापूर्वक केन्द्र की कांग्रेस (इ) सरकार की किसी भी श्रमिक विरोधी नीति को लागू करने तथा ट्रेड यूनियन विरोधी अभियान चलाने से इन्कार कर दिया है। इन्होंने न केवल पुलिस को श्रमिक संघर्षों

में हस्तक्षेप करने से रोका है अपितु कानून व्यवस्था को लागू करने के नाम पर मालिकों की सहायता के लिये पुलिस को तैनात करने से भी इन्कार कर दिया है। इसके साथ ही उन्होंने विध्वंसक तत्वों के नेतृत्व वाले मार्केबाज संगठनों से उद्योगों की रक्षा करने का प्रयास किया है क्योंकि ये तत्व हड़ताल तथा आंदोलन करने के अधिकार का अनुचित उपयोग करना चाहते हैं। इन राज्यों के श्रम विभाग औद्योगिक सम्बन्धों को बनाए रखने वाले तंत्र को और अधिक प्रभावी बनाने के लिये ऐसे सभी मामलों में तत्काल हस्तक्षेप करते हैं।

भारतीय संविधान में अपनी सभी सीमाओं के होने पर भी उन्होंने सफलतापूर्वक भूमि सुधारों को लागू किया है। पश्चिम बंगाल देश भर में अग्रणी है। उन्होंने औद्योगिक सम्बन्धों तथा राज्य के औद्योगिक विकास से सम्बन्धित सभी मामलों में जनता के लोकतांत्रिक अधिकारों को बनाए रखा है; वे श्रमिक संघों के साथ नियमित विचार विमर्श करती हैं और अपनी कार्यसूची में इस काम को प्राथमिकता देती हैं। केवल इन्हीं राज्यों में साम्प्रदायिक तथा विभाजक शक्तियाँ अपने सिर उठा नहीं सकी हैं। स्थिरता, विकास, लोकतंत्र तथा साम्प्रदायिक सौहार्द इन राज्यों का प्रधान लक्षण है। ये राज्य देश में एक आदर्श माडल प्रस्तुत करते हैं।

श्रमिक वर्ग मार्गदर्शन करे

श्रमिक वर्ग को इस प्रकार की परिस्थितियों का पूरा अनुभव है, इसलिये उसे उपरोक्त पृष्ठभूमि के दृष्टिगत स्पष्ट एवं सकारात्मक निर्णय लेना होगा। श्रमिक जनता की सभी श्रेणियों ने अपनी सम्बद्धताओं की विघ्न-बाधाओं से ऊपर उठ कर नयी नीतियों के प्रत्येक पक्ष के विरुद्ध संघर्ष किया है। उसने इन नीतियों को लागू किये जाने का पग-पग पर विरोध किया है। उनकी संघर्ष की एकता ट्रेड यूनियनों की राष्ट्रीय अभियान समिति के रूप में प्रतिबिम्बित हुई है जो ट्रेड यूनियन एकता का अब तक का सबसे बड़ा प्रदर्शन था। इसके पश्चात् जन संगठनों के राष्ट्रीय मंच के अन्तर्गत श्रमिकों की अपने सहयोगियों किसानों, खेत मजदूरों, छात्रों, युवाओं तथा महिलाओं के संगठनों के साथ एकता स्थापित हुई। चार देशव्यापी हड़तालों जिसमें भारत बंद भी शामिल है तथा संघर्ष की अनेक उद्योगवार कार्रवाईयों से इन नयी अर्थिक नीतियों के विरुद्ध जन कार्रवाईयों के ऐतिहासिक विकास के महत्व का पता चलता है। उन्होंने अपनी तात्कालिक मांगों की परिधि से बाहर निकल कर संघर्ष के क्षेत्र को व्यापक बना डाला है। उन्होंने र माज के अग्रणी दस्ते के रूप में उपरोक्त सभी राष्ट्रीय मुद्दों पर विशाल स्तर पर हस्तक्षेप किया है और जनता का समर्थन भी उन्हें मिला है। उन्होंने देश की आत्म निर्भरता तथा आर्थिक सम्प्रभुता की रक्षा करने के लिये संघर्ष किया है, उन्होंने देश की एकता तथा अखण्डता और उसके धर्मनिरपेक्ष राष्ट्रीय चरित्र की रक्षा करने के लिए संघर्ष किया है। अब देश के भाग्य का निर्णय लेने का समय आ गया है। श्रमिक वर्ग इन नीति निर्धारकों— भ्रष्ट कांग्रेस (आइ) जो देश तथा उसकी स्वतंत्रता को बेच देना चाहती है, को चुनावों में कमरतोड़ पराजय दे। उन्हें उनके सहगणों— समान रूप से भ्रष्ट भाजपा जो देश

को विभाजित करना चाहती है को भी ऐसी ही घोर पराजय देनी होगी। यदि ऐसा नहीं किया गया तो ये राष्ट्र विरोधी, जन विरोधी, प्रतिक्रियावादी तथा भ्रष्ट शक्तियां देश तथा देश की परिसम्पत्तियों को अन्तर्राष्ट्रीय गिरोहों के साथ मिल कर बरबाद कर देंगी। श्रमिक वर्ग के समक्ष केवल एक विकल्प ही शेष रह जाता है। यह विकल्प है चुनावों में वाम, लोकतांत्रिक, धर्मनिरपेक्ष तथा देशभक्त शक्तियों को विजयी बनाना। सी आइ टी यू को इस काम में नेतृत्वकारी भूमिका निभानी होगी और उसे सभी ट्रेड यूनियनों, श्रमिकों तथा कर्मचारियों को लामबंद करना होगा और अन्य सभी जन संगठनों एवं इन शक्तियों के साथ मिल कर देश के हित में चुनावों में सफलता प्राप्त करनी होगी।

अंतिम हिसाब

अब जबकि श्रमिक वर्ग तथा परिश्रमी जनता द्वारा चुनावों में अपने मत का प्रयोग करने का दिन समीप आ रहा है तो उसे इन पांच वर्षों के उस भयावह समय का स्मरण करना होगा जो अभी समाप्त हुआ है। इन पांच वर्षों में इन सत्ताधारियों ने हमारे सुन्दर देश का जिसे प्रकृति ने अपनी सभी सम्पत्तियों से मालामाल किया है, शोषण किया है, उन्होंने इसे बरबाद किया है और उस अपमानजनक स्थिति में पहुंचा दिया है जहां वह पहले कभी नहीं था। इन महानुभावों ने इसे (हमारे देश को) अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में बेची जाने वाली उपभोक्ता वस्तु बना डाला है। उन्होंने इसके गौरव तथा इसकी गरिमा को बट्टा लगाया है।

भारतीय किसान जो अपने परम्परागत उपकरणों के साथ घोर दोपहर को हल चलाते हैं ताकि वे जन गण का पेट भर सकें इस सरकार की नीतियों के चलते वर्तमान में प्रतिदिन आधा खाने तथा कम कपड़े पहनने पर विवश हैं। वे ऋणों के भारी बोझ के नीचे दब चुका है और नृशंस सामंतवादी अत्याचारों से पीड़ित है।

भारतीय श्रमिकों को राष्ट्र की सम्पूर्ण सम्पदा का सर्जक है, का न केवल अकथनीय सीमा तक घोर शोषण किया जाता है अपितु वह रोजगार अनिश्चितता, कामबंदी तथा औद्योगिक बीमारी की व्याधियों से भी पीड़ित है। उसके ट्रेड यूनियन अधिकारों पर धावा बोला जा रहा है, उसका जीवन स्तर तेजी से नीचे गिर रहा है और उसके रोजगार की गुणवत्ता तथा अवधि दोनों का क्षरण हो रहा है।

इन पांच वर्षों में सरकार ने अमीर वर्ग, तथा विदेशी पूंजीपतियों को मालामाल करने के लिए अनेक उपहार दिये हैं वहीं दूसरी ओर उसे गरीब व्यक्ति के बच्चे के हाथों से रोटी का एक कौर तक छीनने में लज्जा नहीं आई और न ही बीमार तथा वृद्धों को दवाओं से वंचित करने में उसने कोई झिझक दिखाई है। स्वास्थ्य तथा सफाई की सेवाओं को समाप्त करने पर उसकी आत्मा उसे नहीं कचोटती जबकि वंचितों, निःसहायों, निराश्रय लोगों को इसकी अत्यधिक आवश्यकता होती है।

इन पांच वर्षों में सरकार ने जनता पर विदेशी ऋणों का भारी बोझ लाद दिया है। इन ऋणों का भुगतान दरिद्रजनों को करना होगा ताकि वे समृद्ध लोगों के लिए सौंदर्य प्रसाधनों

को जुटा सकें। पिछले पांच वर्षों से इस सरकार की नीतियों के पूर्ण राष्ट्र विरोधी चरित्र तथा इनकी अन्तर्वस्तु को छुपाने के लिए निरंतर झूठ बोला जा रहा है।

पिछले पांच वर्षों में विदेशी लुटेरों ने देश को अनेक घाव दिये हैं। वे पूर्ण रूपेण हमारी नदियों, हमारे समुद्र, वनों तथा खदानों में विद्यमान अपार सम्पदा का दोहन कर रहे हैं। इस प्रकार देश के भविष्य को ही गिरवी रखा जा रहा है।

अभी-अभी समाप्त हुए पांच वर्षों में आर्थिक असमानता बढ़ी है, रिश्वत तथा भ्रष्टाचार में अपार वृद्धि हुई है, बेरोजगारी तथा मूल्य वृद्धि नयी ऊंचाइयों को छूने लगी है, महिलाओं के विरुद्ध पक्षपात बढ़ा है, राष्ट्र के सभी मूल्यों का हास हुआ है, और देश की आत्मनिर्भरता तथा राष्ट्रीय आत्म सम्मान को दफन कर दिया गया है।

पिछले पांच वर्षों में श्रमिकों तथा परिश्रमी जनता ने इन नीतियों के विरुद्ध वीरतापूर्ण संघर्ष किया है। इस संघर्ष में उन्होंने असंख्य बलिदान दिये हैं और साम्प्रदायिक शक्तियों के षड्यंत्रों को विफल करते हुए राष्ट्रीय एकता तथा अखण्डता को बनाए रखा है। अब समय आ गया है कि पिछली सभी बातों का हिसाब किया जाए।

इन्हीं पांच वर्षों में प्रत्येक कारखाने, प्रत्येक खेत, प्रत्येक श्रमिक के परिवार में तथा प्रत्येक झुग्गी-झोपड़ी में रोष एवं आक्रोश की ज्वाला भड़क उठी है। इस जवाला को राष्ट्र, उसकी सम्प्रभुता तथा उसकी जनता के विरुद्ध घृणित कार्य करने वाले लोगों की निर्णायक पराजय के रूप में परिणित करना होगा। यह अपने अधिकारों, अपनी आजीविका और देश की एकता तथा अखण्डता की रक्षा के लिए जारी हमारे अपने संघर्ष का ही एक अभिन्न अंग है।

आईये, वाम, लोकतांत्रिक, धर्म निरपेक्ष तथा देशभक्त शक्तियों की विजय को सुनिश्चित बनाएं।